अनुभूतियों की दस्तकें

डॉ. गिरिजा शंकर मोदी

समर्पण

दुनिया के तमाम
उन लोगों को
जो जीता रहा अपने जीवन का
हर पल
शोषितों और वंचितों के लिये
उनकी भूख पीड़ा
और बदहाली को भोगते हुए
और फिर
मरा और मारा भी गया
उनकी आत्माओं को
इन्कलाब देते हुए
कि
उन्हें भी अधिकार है
इस धरती के संसाधनों पर
समान रूप से
न्याय के साथ
आदमी होकर जीने का...!

डॉ. गिरिजा शंकर मोदी

संदर्भ और सोच

लगातार सोलह वर्षों तक मासिक काव्य पत्रिका - **"आज की कविताएं"** का नियमित सम्पादन और प्रकाशन के क्रम में ही चार कविता-संग्रहों का सम्पादन एवं अपनी दो निबंध-ग्रन्थों और **"संवेदनाओं के हस्ताक्षर"** नामक काव्य पुस्तक के प्रकाशन के लम्बे अन्तराल के बाद **"अनुभूतियों की दस्तकें"** आपके हाथ है। पीड़क अनुभूतियों को शब्द देती यह काव्य-पुस्तक, जो वर्षों से प्रकाशन की प्रत्याशा में थी, वह आज बिहार सरकार मंत्री मण्डल सचिवालय (राज-भाषा) विभाग की पाण्डुलिपि प्रकाशन योजना के तहत प्राप्त राशि से संभव हो पाई है। मैं उक्त सचिवालय के राजभाषा विभाग की पाण्डुलिपि चयन समिति का आभारी हूँ कि आज मैं अपनी संवेदना, दर्द एवं करूणा का, आम जनों से, इस पुस्तक के माध्यम से, साझा कर पाया हूँ।

इस पुस्तक की कविताएँ समय के जिस सोच और चोट से पैदा हुई है, उस पृष्ठ भूमि में कविता के प्रति पैदा अपनी अवधारणाओं में मैं कहना चाहूँगा कि कविता इन दिनों, पूँजी की बाजारवादी संस्कृति में दिन व दिन कठिन होते जा रहे समय के, संघर्षकाल से गुजर रही है। कवि-कर्म कठिन से कठिनतर होता जा रहा है। फिर भी सच्चा कवि चुनौतियों के खिलाफ, आम आदमी की पक्षधरता में अपनी गहराती मजबूत जड़ों के साथ खड़ा हो, अपने उत्तरदायित्व बोध में है। इसके साथ ही यह बात भी ऐतिहासिक सत्य है कि संघर्ष काल कविता का उत्कर्ष काल होता है। विश्व कविताओं में, उत्कृष्ट कविताएं अपने संघर्ष काल में ही सृजित हुई हैं। यह बात भी यहाँ गौरतलब है कि साहित्य की विधाओं में काव्य-विधा ही मानवीय पक्षों को प्रभावी रूप से, सतह से उजागर करती हुई, उसकी लड़ाई लड़ती है, साथ ही अगर बदलते समय की अत्याधुनिक चुनौतियों का सामना कोई कर सकती है, तो वह है काव्य विधा ही।- यह समय का सत्य और उसका श्वेत पत्र भी है। कविता के भाव पक्ष में आदमी की पीड़ा उसकी संवेदना और करूणा अपने उफान पर रहती है, जो सत्य को उद्घाटित करती, कविता का आत्म-तत्त्व है। अतः सब कुछ झूठा हो सकता है, पर कविता झूठी नहीं होती।

आत्म-तत्त्व की इसी पृष्ठभूमि में कवि विश्व नागरिक है, क्योंकि इस धरती पर आदमी संवेदना, दर्द और करुणा को समान रूप से भोगता है और कवि उसे आत्मसात् करता, व्यक्तिवादी नहीं, एक विश्व जीवन जीता है। यों कहें कि विश्व की सारी पीड़ाएं इनमें समा कर बोलती हैं। अतः आज की परिस्थितियों में कवि

का संवेदनशील व्यक्तित्व, पूंजीवाद की विकृतियों से पैदा अनेक मकड़ जालों को जहाँ भोगता है, वहीं वह अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता में आदमी की पीड़ा, उत्पीड़न, शोषण और वंचना को भी भोगता असहज जीवन जीने को मजबूर है। उसके अन्दर पलता द्वन्द्व, ज्वार-भाटा और महाभारत उसके कारक तत्त्वों की शिनाख्त के लिये, जो क्रान्तिभाव और इन्किलाब पैदा करता है, वह आज उनके शब्दों से निसृत हो, काव्य रूप ग्रहण करता है। ये शब्द, संघर्ष के जिस यज्ञ कुण्ड से पैदा होते हैं, वे उन्हें आणुविक कणों से भर आवेशित कर देते हैं और हम आज की कविताओं के शब्द-बिम्बों और ध्वनियों के एक उत्प्रेरक संसार से होकर गुजरते हैं, जो जीवन के साथ-साथ चलता है।

इतना ही नहीं, अपने प्रतिबद्ध सामाजिक जीवन के अलावे, कवि एकान्त जीवन में भी संग्रहित होता है, जहाँ उसकी संवेदना की दुनिया इतनी तुनुक, संवेदी और प्रतिक्रियात्मक होती है कि हर प्रभावी क्षण उनके शब्दों में आकार पाता है। आज के कवि की संवेदनशीलता इतनी भाव वाही है कि वह हर क्षण में जीती हुई, उसे शब्दों में मूर्त्त करने की कला विकसित कर ली है।

कविता में जब, आम आदमी की बात आती है, तो यह बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से ही प्रमुखता से कविता की नाभि बन, उसका प्राण तत्त्व बना हुआ है, तब कविता यहाँ इस रूप में परिभाषित है कि - "यह समय को शब्द देती भोगे गये यथार्थ की ईमानदार अभिव्यक्ति है, जहाँ कोई छेड़-छाड़ या बौद्धिकता की कलम नहीं चलती।" यहाँ कविता की संघर्ष भट्ठी से पैदा एक शब्द भी अकेला इतना अर्थगर्भित व भाव आवेशित रहता है कि संवेदना के सभागार में अपनी उपस्थिति मात्र से ही सब कुछ कह जाता है। अपनी प्रकृति में यह सहज, सरल व बोधगम्य हो अति सम्प्रेषणीय है, यह आज संबोधन, सपाट बयानी और सीधे कथन के रूप में भी है, पर कहीं न कहीं गहराकर कविता बन उभर जाती है। कविता आज वहाँ नहीं है, जहाँ परम्परागत कविताएँ हैं और परम्परा के पाठक जहाँ इसे खोजते हैं।- आज की कविताएं अपने सपाट बयानी के गहराते क्षण में पाठक से संवाद करती हुई, अपने अर्थों और उद्देश्यों में पूर्ण हो जाती हैं। इन कविताओं में पाठक को लगता है, यहाँ सब कुछ उसका अपना ही जाना-पहचाना और भोगा गया यथार्थ है।- आज की कविताओं में कलावादिता के दिन गुजर गये हैं, अब कला यहाँ यथास्थितिवाद का प्रदूषण फैलाने को नहीं है।- आज कविता आदमी की प्रकृत भावना, यौन और सौन्दर्य को उजागर करने, कला और इन्द्रियता के सूक्ष्म जाल के सौन्दर्यभाव में उलझ, उसे उसके विचार तत्त्व से दूर ले जाने वाले स्वान्तः सुखाय की अवधारणाओं में नहीं जीती। आज कविता का प्राण-तत्त्व उसका यथार्थवाद है, जो समय जात है। यों एक समय था कि कविता में यथार्थवाद को कोई जगह नहीं थी। पोब्लो नारूदा ने लिखा था- "जहाँ तक कविता में यथार्थवाद का सवाल है, तो मैं कविता में यथार्थवाद को पसन्द नहीं करता"- पर आज समय ने आवाज दी है और कविता में यथार्थवाद इसकी जरूरत है।

विश्व आज समय की जिन चुनौतियों से जूझ रहा है, वहाँ काव्य सृजन अपने गंभीर होते कठिन दौर से गुजर रहा है। समय की चुनौतियों को शब्द देने कवि को अपने तरकश में जिन शब्दों, मुहावरों और प्रतीकों की आवश्यकता है, वह खोजी और गढ़ी जा रही है। पुराने अस्त्र-शस्त्र से अब आज की लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। कविता आज अपने नये जीवन का साहित्य है, जो परिस्थित्यानुकूल नये मानव के निर्माण की दिशा में संघर्षरत है। साहित्य अपने उत्तरदायित्व बोध में वर्तमान में संघर्षरत रहता हुआ, भविष्य की चिन्ता में जीता है। वर्त्तमान इसे समझे या न समझे, पर भविष्य इसे समझता है। लोकतंत्र के जनक बाल्टायर को उनके जीवन काल में फ्रांस की जनता ने नहीं समझा था, पर जब समझा तो उनकी अस्थियों को कब्र से निकाल कर सम्मानित किया गया था। कविता समय की आलोचना में जीती है। यह अपने समय में जीती हुई भी समय को पार कर जीती हे। समय को पार कर जीना इसकी विराट चेतना का द्योतक है और यहीं कविता में जन पक्षीय नव निर्माण की दिशा तय होती है।

आज हिन्दी कविता की वैश्विक धरातल पर जहाँ बात आती है, वहाँ यह कह देना अतिशयोक्ति न होगी कि आज की परिस्थितियों से पैदा वैश्विक चिन्ता की धरातल पर हिन्दी कविता जितनी सजग और चिन्तित है, उतनी अन्य भाषाओं की कविताएं नहीं। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पैदा होती समस्याओं से जूझती और विमर्श करती हिन्दी कविताएं, जितना आगे बढ़ चुकी हैं, उतनी अन्य भाषाओं की कविताएं नहीं। पिछली सदी के साम्यवादी आन्दोलन, या यों कहें कि मार्क्सवाद ने आदमी के जीवनाधिकार के साथ जीकर, हिन्दी साहित्य की काव्य विधा को, जो दृष्टि-बोध, विस्तार और गहराई दी है, वह कविता को एक इंकिलाबी तेवर और संकल्प की दृढ़ता दे, इसे एक नये आयाम में फैला, सृजन की एक नई बुनियादी दुनिया दी है और कविता का संसार आज विस्तृत है।

इसके साथ दूसरी ओर एक त्रासद स्थिति यह भी है कि पूंजी की दुरभि संधि में उत्तर आधुनिकतावाद ने साहित्य को गैर जरूरी बनाकर, उसे हाशिये पर ढ़केल देने के हर संभव कुचक्र में है, जहाँ यह विचार शून्य, भाव शून्य और संवेदन शून्य भोगवादी अपसंस्कृति को विकसित कर एवं जीवन के हर आदर्श को असुरक्षित कर, उसे खत्म कर देने की मंशा में है। समय की ऐसी दुशवारियों के बीच कविता समय के आड़े खड़ी हो चुनौतियों से जूझती रही है। कविता में यह चिन्ता सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक कारणों के दोगलेपन से पैदा है। इसी दोगलेपन के विरोध में वह व्यक्ति समाज और देश के लिये खड़ी रहती है।

यहाँ ऐसी ही दुशवारियों के बीच पलती दुनिया के कुछ कवियों की एक झलक पा लेना समीचीन होगा, इन कवियों में नाजी हिकमत, निकोला, वाप्तासारोव, कास्तिलो, नजरूल इस्लाम, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना यहाँ प्रस्तुत है। तुर्की के प्रिय कवि नाजी हिकमत अपने निजी जीवन में भी देश और देश की जनता के लिये जीते थे, अपनी

पत्नी के नाम उनकी कविता है-

समाजवाद का मतलब है, मेरी प्रिये
जब लाखों करोड़ों हाथ मिलकर पहाड़ उलट दे,
फिर भी हर हाथ की अलग-अलग शान रहे,
समाजवाद का मतलब है, प्रिये
जब हमारी प्रेमिका हमसे कुछ नहीं चाहे
न पैसा, न शान, न शौकत

देश और मानवता के हित चिन्तन में जान देने वाले समर्पित कवि वल्गारिया के निकोला वप्तासारोव को जब उनकी कविताओं के कारण फायर स्क्वायड द्वारा गोलियों से उड़ाया जा रहा था, तो वे खिस्तोकोतोव की कविता गुनगुना रहे थे -

होता है वह जो / स्वाधीनता के लिये धाराशायी
वह मरता नहीं...

स्पेनिश भाषा के कवि कस्तिलों को 1960 में ग्वाटेमाला के फौजी तानाशाह ने 31 वर्ष की भरी जवानी में जिन्दा जला दिया। उनका कविता है-

एक दिन / मेरे देश के
उदासीन बुद्धिजीवियों को
आम आदमी / कठघरे में खड़ा करेगा,
इन बुद्धिजीवियों की भारी भरकम पोथियों में
आम आदमी की जगह / कभी थी ही नहीं

बंगला देश के क्रान्तिकारी कवि नजरूल इस्लाम की धूमकेतु पत्रिका में 'आनन्द मयीर आगमन' नाम से एक कविता छपी थी, इस कविता के कारण उन्हें एक साल की कठोर कारावास की सजा मिली थी। अदालत के अपने बयान में उन्होंने कहा था-

मैं वह उपकरण हूँ, जो सत्य बोलता है
कोई क्रूर शासक मेरी बाँसुरी छीन सकता है
उसे तोड़ भी सकता है
पर बांसुरी बजाने वाले की आत्मा को
कुंठित नहीं कर सकता।

इसी ठौर पर सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की भी कविता बड़ी गंभीरता से पढ़ी जा सकती है -

अगर तुम्हारे घर के एक कमरे में आग लगी हो
तो क्या तुम दूसरे कमरे में सो पाओगे?
अगर तुम्हारे घर के एक कमरे में कोई रो रहा हो
तो क्या तुम दूसरे कमरे में सो सकोगे?

अगर तुम्हारे घर के एक कमरे में लाशें सड़ रही हो
तो क्या तुम दूसरे कमरे में इबादत कर सकोगे?
अगर हाँ तो मुझे तुमसे कुछ नहीं कहना है।

ये कविताएं सताए जा रहे आदमी के हित चिन्तन में, यथार्थ की धरती पर खड़ी हो, कविता के अर्थ और उद्देश्य को पूर्ण करती है। यहाँ कहीं न तो कला के गहराते बादल खण्ड हैं और न कोई अपरोक्ष कथन। आज की कविताएँ अपने वजूद के साथ, समय को चोट देती, यहीं स्थिर है।

कवि एक विश्व नागरिक है। उसकी दृष्टि व्यापक-बोध और सोच से होकर गुजरती है। वह आज के विश्व के विचारकों की विभिन्न वैचारिक दुनिया से गुजरती हुई, अपने विचारों के साथ, मानवता के बिल्कुल करीब जीती हुई, सर्जक की भूमिका में आशावादी है। विचारकों में डेनियल वेल ने इस सदी को विचारधारा का अन्त कहा है, फू को पामा ने इतिहास का अन्त कहा है, सुधीर पचौरी ने कविता का अन्त कहा है, जाक दारीव ने दुनिया से मार्क्सवाद के अन्त की बात की है। फिर पूंजीवाद का दिवालियापन और परम्परागत अर्थशास्त्र के विरोध में न्यूयार्क के जोकार्त्ता पार्क की वैचारिक क्रान्ति का उद्‌भव, एक नई विचारधारा की बात कर रहा है और इस बीच अपने दिवालियापन से जूझता अमेरिका अपनी जीवन रक्षा को बाजारवाद के अनेकानेक खूनी पंजे, ऑक्टोपस की तरह विकासशील एवं तीसरी दुनिया के देशों में फैला, उन देशों के लोगों को उपभोक्ता और भोगी बना रहा है, जिससे एक कर्महीन, हृदय हीन और विवेकहीन पीढ़ी पैदा हो रही है। इस पीढ़ी के कारण देश के भविष्य की सबसे त्रासद स्थिति यह है कि ये पीढियाँ अपनी रचनात्मक आवश्यकता की पूर्त्ति किसी साहित्य, दर्शन और इतिहास से नहीं करती। ये इसकी पूर्त्ति दूर दर्शन, कम्प्यूटर, मोबाइल और सेक्स आधारित रंगीन पत्रिकाओं से करते हैं। इस प्रकार पूंजीवाद आदमी को अपने उत्पाद की श्रेणी में ले आया है। पर साहित्य मानवीय मूल्यों के पुजारी, रक्षक और सर्जक की भूमिका में कभी उत्पाद व मुनाफा का माल नहीं हो सकता। साहित्य एक मिशन है, जो मानव विद्वेषी किसी भी हरकत के खिलाफ खड़ा रहता है।

इस विश्व व्यवस्था की घेराबन्दी और आक्रामकता में हमारा भारतीय समाज भी बड़ी तेजी से दुर्दशा के दहलीज पर दस्तक देना प्रारम्भ कर दिया है। यह भी वर्त्तमान विश्व को भोगता दिन व दिन खुदगर्ज, मूल्यहीन और अनैतिक होता जा रहा है। यह अपनी तमाम भौतिक इच्छाओं की पूर्ति बिना किसी त्याग तपस्या और मिहनत के, क्षण में प्राप्त कर लेना चाहता है। इस चाहत में इसके आपसी रिश्ते के तार तेजी से टूट रहे हैं। सारी मर्यादाएं नैतिकता और सोच दूर की कौड़ी होती जा रही है। अर्थ की चाह में संस्कृति का ऐसा घोर पतन है कि मॉडल और अभिनेत्रियाँ पत्रिकाओं को अपनी नंगी तस्वीर देने में भी नहीं हिचकिचाती, देह के प्रति इन्हें कोई संकोच नहीं है। आज कवि चुनौतियों के महाजाल में यहाँ भी फंसा है। वह

सोचता है कि ऐसी नैतिक शून्यता के अमर्यादित होते जीवन में, हजारों हजार साल की हमारी सभ्यता और संस्कृति के विध्वंश पर कैसा मानव निर्मित होगा? सोचता है हजारों-हजार साल के सांस्कृतिक मूल्यों पर भौतिकता का ताण्डव आदमी को कहाँ ले जायेगा?

आज हम जिस विश्व-गाँव में जीने को मजबूर हैं, वहाँ एक भयावह शून्य के बीच रिश्ते के तार टूट सिमटते चले जा रहे हैं। स्थिति की विडम्बना यह है कि जहाँ से पश्चिम रिश्ते के द्वार, पुनः लौटने के हर प्रयास में है। वहाँ हम एक अंधी दौड़ में रिश्ते से दूर जल्द पहुँच जाने की होड़ में हैं। अमेरिका और ब्रिटिन जैसे देश पिछले कई चुनाव, रिश्ते के टूटते तारों को मुद्दा बना कर लड़ चुके हैं। वहाँ अब रिश्ते के सुगंध का खत्म होना जीवन का खत्म हो जाना समझा जा रहा है। बुजुर्गों का अकेला जीवन अब इसके गले में मौत का फंदा है।

यहाँ कवि अपने गंभीर चिन्तन में है कि कौन आखिर आदमी को बाजारवाद के मकड़ जाल से निकाल, उसमें संवेदना का संसार विकसित करेगा? कौन आखिर आदमी से करूणा, दया और सहानुभूति की गंगोतरी, फिर से प्रवाहित करायेगा? कवि को आज यही चिन्ता सता रही है, और अन्त में वह अपने चिन्तन में पाता है कि यह जिम्मेवारी मूलतः उनकी ही है। कवि की उक्त चिन्ता के साथ एक गंभीर बात यह भी है कि किसी कौम से साहित्य का अन्त होना, उस कौम का भी धरती से विलीन हो जाना होता है। मेसोपोटामिया की सभ्यता और संस्कृति में असीरिया साम्राज्य के उदय ने अपनी राजधानी निनवे में इसे भोगा है। साहित्य का अन्त होने से संस्कृति का अन्त हो जाता है और संस्कृति के अन्त होते ही संबंधित कौम ही धरती से विलुप्त हो जाती है। इसी परिप्रेक्ष्य में साहित्य के साथ यह जरूरी बात जुड़ी हुई है कि आदमी को साहित्य की आवश्यकता हो या न हो पर साहित्य को आदमी की आवश्यकता है। फिर एक सवालिया निशान है साहित्यकारों के समक्ष कि साहित्य आदमी की आवश्यक आवश्यकता हो, कैसे उसकी दिनचर्या में जुड़ जाये?

कविता अपनी परिभाषा में निरपेक्ष शब्द नहीं जानती। वह समय, संघर्ष और मानव सापेक्ष है। इसे आदमी की हर विषम परिस्थितियों में लड़ना है। यह न तो किसी संघर्ष से ऊपर रह सकती है और न तटस्थ रह सकती है। यह संघर्ष के बीच अपने जीवन धर्म को विकसित करती रहती है। इनके मस्तिष्क की रणभूमि में कोई जगह निर्वात नहीं रहती। अतः आदमी की सारी समस्याओं का निदान इन्हीं से है। और अब वह समय नहीं है कि कविता अपनी गैर जिम्मेदाराना जीवन जीए। एक समय था कि आजादी के पूर्व सदियों इसे आदमी से कुछ लेना देना नहीं रहा था। यह आदमी के सवालों के बीच नहीं थी। यहाँ कविता क्रान्ति के किसी पथ पर अग्रसर न थी, जैसा कि यूरोपीय और दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में था। अपने देश में आदमी तो तथाकथित धर्म और ईश्वर के पौशाचिक जबड़ों में बन्द स्वर्ग-नर्क, दान वरदान, जन्म पुनर्जन्म को भोगता रहा था और

आज भी ऐसी स्थितियाँ बरकरार है। यहाँ के ईश्वर, मठ व मंदिर; लूट, शोषण, अत्याचार और कालाबाजारियों के शार्गिद हैं, इनके तहखाने में न जाने कितनी लूटी गई आत्माओं की आहें, आँसू, पुकार और तड़पने बन्द हैं।

आज के कवियों पर इस सारी दु:खद स्थितियों की जिम्मेदारी एक साथ आ पड़ी है। इन बोझों से दबा कवि आज का कवि है। यह आज का कवि अपने संघर्ष ताप की इस ऊर्जा के बीच अपनी कलम को इस ओर भी मोड़ संघर्षरत है। आज कवि लड़ाई के अनेक मोर्चे पर हैं। काव्य जगत इस कठिनतर होते बहुआयामी संघर्ष काल में कहाँ कौन सा रूप लेगा नहीं कहा जा सकता?

आज का कवि समय की विडम्वना पूर्ण स्थितियों के मानव विद्वेषी मलकाठी माहौल में विद्रोही तेवर में जी रहा है। यहाँ आज की लड़ाई आदमी ईश्वर और धर्म सबों से एक साथ है। अत: कविता के पुराने रचना विधान से आज की लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। आज कविता एक नया तेवर नया मिजाज में खड़ी हो रही है, जो परिस्थिति विशेष में समय के चाक पर स्वत: पैदा हो रहे हैं। कविता का आज समय के स्याह पक्ष से होकर गुजरना उसकी नियति में शुमार है।

ऊपर की अपनी बातों में मैंने अपनी इस पुस्तक की संग्रहित कविताओं की जमीन की बातें की है और फिर बातें उस मौसम की हुई है, जहाँ यह अंकुरित हो पल्लवित हुई है। मैंने सोचा था अपने काव्य संसार की वे बातें कर लूँ, जहाँ से मैं रोज कविताओं में पैदा होता रहा हूँ। मैंने ऐसा किया भी, पर फिर सोचता हूँ महत्त्व यहाँ नहीं हैं, महत्त्व वहाँ है कि कविताओं के पारायणोपरान्त पाठक क्या-क्या सोचने विचारणें को बाध्य हैं और उनकी जिन्दगी किस ओर करवट बदलने की तैयारियाँ करने लगती हैं।

मैं इस काव्य-पुस्तक की कविताओं के लिये उन पीड़क कारकों का आभारी हूँ, जिसकी प्रतिक्रिया में मेरी भावनाएं आकार पाती रही हैं।

अन्त में, मैं अवतार सिंह 'पाश' की निम्न काव्य पंक्तियों के साथ, अपनी काव्य पुस्तक 'संवेदनाओं के हस्ताक्षर' के बाद 'अनुभूतियों की दस्तकें' आपके हाथ छोड़ता हूँ-

हम लड़ेंगे साथी, दास मौसम के खिलाफ
हम बुनेंगे साथी जिन्दगी के टुकड़े,
हम लड़ेंगे जब तक़ दुनिया में
लड़ने की जरूरत बाकी है,
हम लड़ेंगे कि बगैर लड़े कुछ नहीं मिलता,
हम लड़ेंगे कि अब तक क्यों नही लड़े,
जो लड़ते हुए मर गये
उनकी याद जिन्दा रखने के लिये
हम लड़ेंगे साथी।

अनुक्रम

कवि	19
कवि और कविता	20
कविता; एक जुलूस	22
कविता की एक जिल्द	24
औरत और कविताएँ	26
इस व्यवस्था में	28
लोकतंत्र में कविताएँ	30
मैं रहूँ या न रहूँ	32
बेटी	34
औरत : चार कविताएँ	35
क्यों माँ?	40
पिता और बच्चे	42
नरवलि	44
बेखबर लोकतंत्र	46
खूंखार दुनिया में	48
इज्जत	50
अछूत के बेटे	51
आकांक्षा का दर्द	53
शव यात्रा	55
अब यह समय	57
दंगा	59
आग साम्प्रदायिकता की; चार कविताएँ	61
सूत्र रूपी ज्ञान	64
बस जाना चाहता हूँ वहाँ	66
समय बहुत खराब है	68
मुझे आदमी बना रहने दो	69
धर्म के नासूर	70
आदमी इस देश का	71
विडम्बना	73
जनता नहीं जानती	75
वेदना	77
रिश्ता	79
थके-पल	80
तृष्णा	81
ट्रेन की खिड़की से	82
उद्विग्नता	84
संध्या गहरा जब हुई रात	85
शहर; रात का आखिरी पहर	86
तट पर बंधे नाव	88
पक्षी, एकाकी	89
जीवन सत्य	90

संघर्ष 91
जीवन-दर्द 93
पछतावा 94
भटकाव 95
लहर 96
जीवन 98
बादल 99
परिवर्त्तन 100
महत्त्वाकांक्षा का दर्द 101
निराशा 103
घर वालों ने 104
घोर गरीबी 106
याद पुरानी 108
गाँव हमारा 110
गाँवों में शहर 112
पड़ोस 114
गीत 115
आहट 117
शिशिर 118
देह-गंध 120
लूट 121
विस्थापन 122
भूख का दस्तावेज 123
भूख 126
भूखे पेट का दिन 127
क्रान्ति-बीज 129
क्रान्ति-पथ 131
कचहरी 132
तब और अब 135
कई दिनों के बाद 137
इक्कीसवीं सदी 141

अनुभूतियों की दस्तकें

कवि

मैं समझता हूँ मेरे शब्द अब
न गढ़ पाते हैं आदमी
और न हो पाते हैं उनके शिल्प ॰
मेरे शब्दों की आत्मा में
गूंजता संगीत
अब संक्रमित नहीं हो पाता
आदमी में
कि झंकृत कर दे उसके मन का तार ॰
अब तो जगह-जगह
दिखता है मात्र
अंधेरे में समाया
भयावह जंगल ॰
फिर भी मैं रचता हूँ
रचता रहूँगा
शब्दों का शिल्प संसार
गढ़ने को आदमी ॰
सोचता हूँ कभी न कभी तो
समय चक्र
मेरे शब्द शिल्पों से गढ़ लेगा आदमी
और गूंजती रहेगी उनमें
इनकी ध्वन्यात्मकता ❑